लोक-परलोक

# लोक-परलोक

लेखक के अन्य उपन्यास

एक नीड़ दो पंछी

नये मोड़

सागर, लहर और मनुष्य

# लोक-परलोक

(पश्चिमी उत्तर प्रदेश के तीर्थ ग्राम
का एक मर्मस्पर्शी जीवन-चित्र)

उदयशंकर भट्ट




**राजकमल प्रकाशन**
दिल्ली बम्बई इलाहाबाद पटना मद्रास

© उदयशंकर भट्ट, १९५८

प्रथम संस्करण, १९५८

मूल्य  तीन रुपये पचास नये पैसे

प्रकाशक
राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
दिल्ली ।

मुद्रक
श्री गोपीनाथ सेठ
नवीन प्रेस दिल्ली ।

उस दिन सवेरे से ही टीले पर इतनी रौनक और चहल पहल थी कि झुंड के झुंड स्त्री-पुरुष, बालक-बूढ़े, पास ही गंगा-स्नान करके 'जय देवी की' 'जय माता की', 'जय कल्याणी की', 'जय-जय' कहते ऊपर चढ़ रहे थे। कंधों पर रखी बांसों की लाठियों पर धोती सुखाते, गीली धोतियां ओढ़े नंगे पैर घुटनों तक कच्ची धोती, मैले कुरते या कमीज पहने चले आ रहे थे। बगल में, कंधों पर पोटली रखे, पीली, लाल काली गोट लगे छोटे के लहंगे वैसी ही रंग बिरंगी ओढ़नी ओढ़े, हाथों में लाल हरी चूड़ियां, पछेली, छन कड़े, गले में हंसली कंठी रंग बिरंग नकली मोतियों, मूंगों की मालाएं पहने औरतों के झुंड टीले पर दिखाई दे रहे थे। लड़के उछलते कूदते लकड़ी टेकते, जवान उमंगों में भरे मन में कामनाएं लिये कोई कतार में कोई अकेले, बिखरे आते जा रहे थे। किसी के सिर पर मैली टोपी कोई नंगे सिर कोई पगड़ी बांधे खखारते, हंसते सांसों में मनौती भरे हुए थे। ऊपर टीले पर कल्याणी देवी के मंदिर के सामने तख्त बिछाये सिरकियों या खुले चबूतरों पर पूजा की सामग्री बेचने वालों की दुकानें लगी थीं। पास ही कनेर, गेंदा, गुलबहार के फूल टोकरियों में बिके जा रहे थे। दुकानदार और फूल बेचने वाली औरतें चिल्ला चिल्लाकर अपने सामान की आवाजें लगा रहे थे। पूजा की सामग्री में बताशे, पोले नारियल, लाल कपड़े के चीथड़े कौड़ी, धूप, दीप और गहनों में टीन के टुकड़ों के हार थे। पांच आने से लेकर सवा रुपये तक का सामान! असली

मन्दिर और बाहर के छोटे मन्दिरों में घंटे बज रहे थे। मैदान में दुकानदारों का कोलाहल, एक एक टुकड़े के लिए लड़ने-झगड़ने वाले कुत्तों, कौवों और चीलों के तीव्र, मध्य और निषादी स्वर, भिखारियों, भिखमंगों की गला फाड़ आवाजें, छोटी बड़ी लड़कियों का यात्रियों का पल्ला पकड़कर रास्ता रोककर पैसा माँगने की चिंघाड़ और यात्रियों की भिड़कियाँ ये सब एक अजीब कोलाहल पैदा कर रही थीं। मन्दिरों के भीतर बाहर, आँगन में पुजारियों, माँगने वालों, चढ़ावा चढ़ाने वालों और मनौती माँगने वाले यात्रियों में कई तरह के वाक् युद्ध चल रहे थे। कहीं नारियल फोड़े जा रहे थे, कहीं पंडे देवी के नाम पर दक्षिणा के लिए जूझ रहे थे। यात्रियों के झुंड के झुंड आते, श्रद्धा के अनुसार पूजा करते, फूल-बताशे चढ़ाते, घंटे बजाते, साष्टांग दण्डवत् करते, हाथ जोड़ते, सिर जमीन से छुआकर मनौती माँगते, माथा और नाक रगड़ते, प्रसाद बाँटते और बाहर निकल आते। फिर एक एक पैसे के लिए मधुमक्खियों की तरह चारों ओर से घेरने वाले भिखारियों, भिखमंगों तथा माँगने वालों से पीछा छुड़ाकर यात्री लोग किसी पेड़ के नीचे या कहीं कुएँ की मन पर, कहीं कच्चे चबूतरों पर अपनी पोटलियाँ खोल कर जीमते और चल देते।

कुछ ऐसे भी सम्पन्न परिवार यात्री थे जो कई दिन पहले मन्दिर के पास बने मकानों में ठहर गए थे। उनकी तरफ से पूजा के बाद पंडों का खीर पूरी लड्डुओं का भोजन कराया जाता था। कहीं इसी प्रकार के भोजन बन रहे थे। कुछ लोग बाजार से लड्डुओं के थाल देवी को चढ़ाने के लिए ला रहे थे। एक तरफ मन्दिर के पास दालान में कुछ लोग बैठे भाँग घोट रहे थे, दूसरी ओर साधुओं का दल धूनी रमाए सुल्फे गाँजे की लौ उठाकर बीच बीच में 'जय जय' पुकार उठता। यात्रियों का समूह उधर भी जाता और माँगने के लिए फैलाए कपड़ों पर पैसा धरता, कोई अन्नावरी मसान चढ़ाता, हाथ जोड़ता और लौट आता।

बड़े मन्दिर के आगने के दोनों-बाजों म दो पुजारी बड़े यात्रियों को पान का प्रसाद द रह थे। भीतर एक आदमी लड़कों बताशों पैसों पया के ढेर अलग कर रहा था। दरवाज़े के पास दो-तीन आदमी खड़े डावे का हिसाब लगाते यह देख रहे थे कि चढ़ावे का माल इधर-उधर तो नहीं किया जा रहा है।

लगभग दोपहर बारह बजे तक यही क्रम रहा। यात्रियों की संख्या म हुई। मन्दिर के कमचारियों म से एक-एक करके उठने लगा। जा सामग्री के ढेर अलग कर दिए गए। देवी की मूर्ति क पास रह ए पीले, लाल चीथड़ा क ढेर, हार, फूटी कौड़िया पैरों में कुचले न। इसी समय भाग घोटने वालों म से एक ने 'हर हर महादेव' ऐसी भावे हर गुन गाव की आवाज़ लगाई तो दूसरे ने उस दुहराया। तीसरा हाथ की बीड़ी फेंककर हाथ धोने उठा। बाल्टी म लोटे से भाग डाली जाने लगी। उसी समय एक कह उठा—

'ब ब ब जो विजया की निन्दा करे ताहि खाहि कालिका माई। चलो रे चलो।'

एक पुजारी वहीं से भाँग की प्रशंसा में बोल उठा—

"गूढ़ा ब्रह्म विचार सार परमात्मा जगद् व्यापिनीम्।"

सिल-बट्टे का भाँग की बूँदें चाटाने और कपड़ा बाल्टी पर डककर ध्यान लगाने के बाद एक एक करके लोगों न लोटे चढ़ाये तो एक बोला—"अरे, ऐसे का है थोड़ी-सी और ल न!" इतना कहकर उसने बाँटने वाले पर जोर दिया।

दूसरा बोला 'आज मया ने सुनी है तो कसर क्यों रह!'

इसी तरह सबन और दिनों से अधिक मात्रा म भाँग पी। ब्राह्मण भोजन कराने वाले यात्रियों का भी आग्रह करके पिलाई गई। कुछ लोग लोटा लकर निबटने चले गए और बाकी बीड़ी का धुआँ उड़ान लग। चढ़ावा गिना जाने लगा। नारियल बताशे, रुपय पैसे, कौड़ियाँ तक बँट गए। लोगों ने अपना अपना हिस्सा लिया और मन्दिर की आलमारियों

म बन्द कर दिया। जीमने के लिए जितने लोगों को बुलाया गया था, उससे दूने लोग इकट्ठे हो गए। कुछ गिद्धों की तरह आस लगाए जम गए और कुछ स्त्रियाँ और बच्चे लोटा और गिलास लेकर आ जमे। एक तरफ कुत्तों का दल ताक लगाए कानाफूसी कर रहा था। पंडे और मंदिर की मुंडेर पर कतार में बैठे कौए स्तोत्र बोल रहे थे। आँगन में कथों पर अँगोछे रखे ब्राह्मण भोजन के लिए जमा हुए। पास ही दो एक ठाकुर भी जमकर बैठ गए। एक ने चुपचाप सेठ को बतला दिया कि ये ठाकुर हैं। भोजन शुरू हुआ तो सेठ की पत्नी ने पति से कहा—

ये तो बहुत आदमी आ गए, हमने तो बारह का प्रबन्ध किया था।'

"हाँ, क्या करें ?'

फिर अब और तो इतनी जल्दी नहीं बन सकता।"

मैं कुछ इन्तजाम करता हूँ।' इतना कहकर सेठ ने अपने एक आदमी के साथ पेड़ा की बाजार भेजकर मिठाई मँगाई, तब कहीं जाकर ब्राह्मण भोजन पूरा हुआ। शेष साधुओं को बाँट दिया गया। पति पत्नी ने थोड़ा बहुत खाकर सन्तोष किया।

पत्नी बोली— कैसे हैं ये लोग इतना खाया ?

क्या कहा जाय मुफ्त का माल है फिर ब्राह्मण !

दोनों ने दूसरा भोजन के बाद कुछ वहीं लेट गए थे। शेष जो चारे धीरे खिसक उनके पैर डगमगा रहे थे। मन्दिर के पट बन्द हो गए। देवी की मूर्ति के पास कुचले हुए फूलों, कीचड़ और इधर-उधर पड़ी हुई बासी कौड़ियों के सिवा कुछ नहीं था। दालान में पुजारियों की नाकें बाज रही थीं और बाहर पड़ी पत्तलों पर कुत्तों और भंगियों के संग्राम चल रहे थे। केवल दूर मातियों के लौटते हुए जय जय के स्वर सुनाई दे रहे थे।

गगा के तट पर पद्मपुरी नाम के तीन ग्राम के टीले पर देवी के मन्दिर मे वष म दो बार यात्रिया का मेला लगता है। इस 'जात' कहते हैं। असाढ और क्वार के महीने म दूर दूर स लोग देवी की पूजा करने आत हैं। गगा का किनारा होने से स्नान करने वालो की सख्या भी कम नहीं रहती। यह गाव स्टेशन स तीन चार मील दूर है। कच्ची सडक पार करके यहा आना होता है। बहुत से शहरी यात्री वही स्टेशन के पास स्नान करके लौट जाते हैं। पद्मपुरी तो सिफ वे ही लाग आते हैं जो कुछ दिन एकान्त में गगा सेवन की चाह रखते हैं या देवी की मानता मानते हैं या फिर आसपास के गाव के लोग। इसलिए, दूसरे तीर्थों की तरह यहा हर समय भीड भाड नहीं रहती। गगा के पूरब म यह गाव बसा हुआ है। किनारे किनारे दूर तक साधुओं की कुटिया बनी हुई हैं। कहा जाता है यह गाव बहुत पुराना है। कुछ लोग *महाभारत की घटनाओं स भी इस गाव का सम्बन्ध जोडते* हैं। बस, बडे बडे महात्मा, तपस्वी, साधु और सन्त इस स्थान पर तप, मनन और चिन्तन करते रहे हैं।

गाँव म ब्राह्मण, पण्डों और ठाकुरों की सख्या अधिक है। अब चमार, लोधे गडरिये भी कुछ दिनों मे काफी सख्या म यहा बस गए हैं। दस पाच बनिया के घर भी थे लेकिन अब उनका नाम भर रह गया है। कुछ लोग व्यापार न होने से बाहर चले गए बाकी मर मरा गए। जमादार ठाकुरा का किसी समय बडा दबदबा था। उनसे पहले ब्राह्मणा का भी काफी प्रभाव रहा है। पर अब दोनो—ब्राह्मण और ठाकुर—यौवन बीतने पर बुढापे की तरह लडखडा रहे हैं।

यह कहना कठिन है कि गाँव के इन लोगा पर शहर का प्रभाव नहीं पडा है। पास ही कई अच्छे शहर हैं। तहसील, थाने और जिले के अलावा तीस चालीस मील के फासले पर एक जगह विश्वविद्यालय और आसपास कई कालेज हैं, जहाँ इस गाव के कभी कोई लडके पढने चले जाते हैं। फिर भी, गाव म पढे लिखे लोगा की सख्या कम है।

जो पढ जाते हैं, उन्हें नौकरी के लिए बाहर जाना पडता है। इधर गाँव म यात्रियो क आने जाने का भी काफी प्रभाव पडा है। पहले यहाँ सस्कृत की एक पाठशाला थी, विद्यार्थियो को सस्कृत म बोलना सिखाया जाता था। वेद वेदाग के अलावा व्याकरण, न्याय शास्त्र आदि पढाए जात थ। कुछ लाग जो उस पाठशाला म पढे थे, अब भी गाँव म हैं। आय समाज क प्रभाव म आये हुए कुछ ठाकुर भी थ, जो अब नही रहे। पर उस ज्ञान के खडहर अब भी बने है। एक तरह से इस गाव का सारा वातावरण अधकचरा ज्ञान और अज्ञान की कडी पर झूल रहा है। साधुओ के प्रभाव म अद्वैत वेदान्त और गीता का भी इसम प्रत्यक्ष पर मौखिक विकास हुआ है। एक तरह से यह कहना चाहिए कि गाँव के लाग साधारण पढ लिखे हैं और पडा म काम चलाऊ सस्कृत क जानन वाले। यात्रियो क आने पर 'गगा लहरी', शिव महिम्नस्तोत्र, वेदपाठ और छुटपुट 'रामचरित मानस' का पाठ कभी-कभी मन्दिरा म और गगा के किनारे सुन पडता है। इस सम्पूर्ण ज्ञान का लक्ष्य एक ही है कि यात्री को किस प्रकार प्रभावित किया जा सके और दक्षिणा स मुट्ठी गरम करने के साथ साथ भोजन और भाँग की व्यवस्था हो। लड्डू कचौरी खीर मालपुओ के लिए कौन-कौनसे हथकडे काम म लाय जायें जिससे गाँव के सारे वातावरण म घी की सुगन्ध स बन पकवानो क लिए लालायित जीभों और कुडकुडात पेटो को तृप्ति मिल।

इधर ठाकुर और दूसरी जाति के लोग भी इस मौके से चूकना नहीं जानत। व किसी-न किसी बहाने यात्रिया के विविध स्वादमय भोजन म अपना पतृक अधिकार समझने म नही हिचकते।

गगा क पश्चिमी तट पर ठाकुरा की एक टेकरी है और गाँव के बीच म ब्राह्मणो की बस्ती। बाहर लोध और चमारों के घर। टेकरी से दक्षिण और पश्चिमी कोने म दूसरे टीले पर दवी का मन्दिर है। गाँव के आँचल का छूती हुई गगा बहती है। बाहर स गगा घाट की ओर आने

पर एक लकीर की तरह सीधा बाजार है, जहा प द्रह-बीस से ज्यादा दुकानें नहीं हैं—तीन-चार दुकानें आने-जान की, एक-दो पसारी की एक बजाज का, छ-सात हलवाइयों की और बाकी पानवाला की। सुबह-शाम किसी भी समय गगा की रज माथ बाह छाती, कमर और परों पर लपट बीडी पीत तम्बाकू फाकते पड दिखाई द सकत हैं। कुछ अगरखी पहने, रामानन्दी तिलक लगाए लाग भी दुकाना पर बठ दीख पडत हैं। सारे गाव का सडक ऊबड-खाबड है और बरसात के कीचड स भरी रहती है। वही एकमात्र आन जान का साधन है।

शाम का समय था। बाजार म पान की दुकान पर कुछ लोग बैठ पान खा रह थ। उसी समय दवी के एक पड न आकर तमोली का एक पान का आडर' दिया और वहा बठ गया। बीडी का कश खींचकर धुआ छाडत हुए एक साथी न पूछा— ललिता परसाद, आजकल ता मौजई मौज है जात सो टूटी पर रई है, मसुरी।

ललिता न पापन मुँह म पान भरकर जवाब दिया—

का टूटी पर रइ है पाच आना तानि पाई चार रुपल्ली हिस्सा म आए हैं। छ आना क नारियल बस, चार आना एक सठ दच्छिना म द गया। जिमायव कूँ बठो तो लड्ड खतम है गय। फिर बजार सूँ पडा मगाए बऊ हमन खतम कर दीन। आज कछु रग जमो हो सो सठ न ट बोल दई। अकिल्ल रामवन न बीस लड्डू चौवास पडा और बारह पूरी खाई। तुमनो जानो हो मरे दाँत नायँ, तौऊ पन्द्रह लड्डू दस पेडा और पाँच पूरी म खाय सको। का बताऊँ धीमें चर्ब ह, खातई खात पगत उठि गई नायँ तो पाच-सात लड्डू तो और लावतो। पर या सारे नछमना न बूरे क बनाय ह भला कोइ कितन खातो। कोरो बूरा तो फाकौ मार्य जाय, तुम जानो।

ललिता प्रसाद न पान की पीक बीच बाजार म पिच्च करके थूकी तो उधर तेजी स जात धनुआ लोध के परा पर जा गिरी। वह

चौंका और लौटकर बोला—'देखिक थूकौ करौ पंडित आखेऊँ चली गए है का ?'

अरे लाध के सभरि के बोल, हमारो कसूर है, तोइय सुसरे नायँ गैल। बडे आय लाट साब !'

धनुआ सहमकर बोला—

'उल्टौ चोर कोतवाल कूँ डाँटे। सीधी बात कई तो पण्डित बिगरि परे एक तो ऊपर थूकौ, दूसर आँखें दिखावतें।'

अरे ता का भयौ, बामन को थूक है, सार पवित्र है गयौ।'' वहीं पास बैठे एक दूसरे व्यक्ति ने मजाक में कह डाला।

हां काएकू कहोगे। हमई थूकिवे कू र गय हैं ? जि तो नायँ कहौग कि तुम्हारे मोहल्ला म हैं, जो चाहै करौ।'

दूर से एक फटी-सी आवाज आई—

बजार है धनुआ बजार माहल्ला नायँ। क्रोध में भरकर धनुआ बोला— बामन की बजार मैंऊँ दखतौ। मेरे मोहल्ला में ऐसे थूकते, तो टागि न तोरि दई होती।' इतना कहकर धनुआ जैसे ही आगे बढा वैसे ही तरह-तरह की डाँट बौछार पडने लगी। ललिता प्रसाद ने उसे सम्हालकर कहा—

'टहर तो सइ तरी ऐसी की तसी दिमागई बिगरि गय हैं इन कमीनन क।'

धनुआ बात का जवाब देता बढ रहा था।

इधर दुकान पर बैठे लोगों ने कई तरह से ब्राह्मणों के प्राचीन महत्त्व और आधुनिक युग पर टीकाएं कीं। एक बोला—

अरे कराजुग है कलजुग भया !

कलजुग है तो का भयौ बामन अबऊ ऐसे गय बीत नाय।'

पंडित नेऊ तो बामनई हैं।'

नेक नई तो चमार बामन एक करि दय हैं।

जि गाधी का प्रताप है न होतौ गाधी न जि नौबत आवती।

ग्रब का है, जसें तसें जिन्दगी काटनी है।"

'ग्ररे होयगो गाधी ह्या नायें चल काऊ गाधी फाटी की। गगा मया के सामने बडे-बडे सिर टेकें हैं' चौथ ने कहत हुए मुँह पर हाथ फेरा ग्रौर जेब मे सीक निकालकर दान कुरेदन लगा। इसी समय गगा-तट मे ग्रगाछा पहने सारी देह म रज लपट, गगाजली हाथ म लिये एक युवक ग्राकर रुका ग्रौर पूछने लगा—

'का बात भई, नि लोबेको ग्रा बकि रह्यो हो, मन म तो ग्राइ कें लाग दे मारूँ सारे कूँ, पर चलोई ग्रायो न जाने का बात हती? चचा तुमसूँ कछु बात भई का?' उसने पास बठ एक बूढे मे पूछा। लोगा मे से एक ने बातें सुनाइ तो बोला—'भस्म करि दगो सारेन कूँ, समभि का रक्खी है बामन ग्रवई इतने गय बीत नायें।'

उधर म एक ठाकुर ग्राया तो कहन लगा— ग्ररे ग्रब न काई बामन है न ठाकुर, नायें तो याई गाम मे मजाल है कोई सिर तो उठाय जातो। खोदिकें न गाडि दय जाते सारे। यह कहकर उसने मूँछों पर ताव दिया ग्रौर पान वाले स पान क लिए कहा।

'पीछे के सब पैसा देउ तबई पान मिलिंगे तुम समभा मैं का तक उधार करूँ?"

'ग्ररे द दिगे, क्या मरो जाय, कितन हैं बोल?'

'तुम जानो।'

तू बता।"

'बारह ग्राना है गय हैं।'

ठाकुर न ठठाकर ग्रपनी शरम पर परदा डालते हुए कहा—

'तो का भयो मरो क्या जाय है लगा पान द दिग। ग्रब, जान नई हैं यहाँ पसा साला की कभी परवा नही करी।

पहले पैसा दउ ठाकुर, नि बात भूठी है रोज तुम एसेई क दतो।"

'तू समभ है, तू नायें देगो तो ग्रौर कोऊ नायें देगो।

तो ग्रौर सूँ लै लेउ मैं गरीब ग्रादमीऊँ कबतलक उघार करूँ,

तुमई बताम्रो।'

"अच्छा आज तो न्द वक्त पसा चुकाय दिश।

पान वाले ने पान देते हुए याद दिलाया—

'साढ़े बारह आना याद रखिया ठाकुर ?

'हाँ, हाँ मरौ मयो जाय, ला एक आना के कोरे पान द।"

पानवाले ने बमन स बुडबुडाते हुए एक आन के पान दिये तो ठाकुर पसारी की दुकान पर सुपारी कत्थे के लिए पहुँचा। भाँय भाँय के बाद सुपारी कत्था लिया और हलवाई की दुकान से आध पाव दूध भी उधार लेकर तीन चार कुल्हड उठाए। इसके साथ ही क्षत्रियत्व के महत्व पर व्याख्यान देता आँखों स ओझल हो गया।

पानवाला कहने लगा—

'बजार म कोउ ऐसो है जाको या ठकुरा प उधार न होय काऊ के दस काऊ के पाँच।'

'अरे ता हम का जान नायँ अब इनम र ही का गयो है ठसक ई ठसक है बस। वहीं स एक ने कहा—

'उधार लिग ता पसा दव को नाम नही लिगे। मुडचिरा है मुड चिरा। उधर हलवाई अपनी गद्दी पर बठा ठाकुर पर कमण्ट' कर रहा था। तभी पसारी एक गाहक का मिटठी का तल देता हुआ बोल पडा—

पन्द्रह रुपया हैं प द्रह नक्द, दव को नाम नइ है।

चनो कबऊ तो दिगई एक और आदमी ने गली क मोड स बाजार म जाते हुए कहा।

'ल एक पान माउम्र सवाय द' कहकर उसन पानवाल क पास इकन्नी फेंकी।

'तोय कितनो मिलो माता प सू, एक न पूछा।

द रुपया तीनि आना चारि आना दच्छिना,' ललिता प्रसाद की तरफ मुँह करके बोला तुम्हारो तो इका हिस्सा हो न ?'

हमउ एक पान लिग या इकन्नी म सू, एक माय द।

'हा, हा एक पान इन्हेउ द। आज तो रवडी उडेगी, लछमना सूँ कह आयी हूँ उस्ताद ऐसी चकाचक बने कि रंग जमि जाय, का है कल्लि कू चूनर भारिक मरजोई तो है। तोल भर की अफ्टा चढायी है। 'व व व घोवा रह न गम। पान म तम्बाकू पीनी हारियो रे।" वह पान खाकर उसी पास की गली म छिप गया। इसी समय वलगाडिया की चूँ चूँ सुनाई दी। दुकानों पर वठे पडा क कान खडे हो गए। यात्रिया की गाडियाँ थीं। लोग उठकर गाडी के पीछे हो लिय। नाम धाम, पते-ठिकान की फहरिस्तें खुलीं वहिया लाई गइ, धमशालाश्रा के दरवाजे चरमराये। वाजार म हल्का कोलाहल फैल गया। उधर दीय जले और हलवाइयों ने मिठाइयो के थाल आलमारिया स निकाल कर तरौनों पर सजा दिए। साधु-सन्यासी, गृहस्था का आना-जाना बन गया। कोई दूध पी रहा था कोई रवडी, कोई पडा उडा रहा था। अधिकतर लोग कुल्हडो म दूध या दौनों म रवडी मिठाई ले जा रह थे। सबकी यह शिकायत थी कि मिठाई अच्छी नहीं बनती, हलवाई बेईमान हो गए हैं। कोई खाय तो क्या खाय? कुत्ते उन्मुख होकर खाने वाला के दौनों, कुल्हडों को एस दख रह थे जसे पपीहा स्वाति बूँद की प्रतीक्षा में आसमान ताकता है। फिर फूटे हुए कुल्हडो दौनों पर गुर्राते हुए उनका एक दूसरे पर टूट पडना या तो उन्होंने पडों से सीखा होगा या फिर उनसे पद्मपुरी के लोगों न। यह कोई नहीं वता सकता इसकी गुणगान कहा और कसे हुई।

ललिता प्रमाद वाजार की खबरों में अपन को ताजा करके माता के मन्दिर पहुँचा तो ठाकुर विक्रमसिंह पडों को गालिया द रहा था। नशे से उसकी आँखें लाल थीं, जैसे निकली पड रही हों। दो एक आदमी दूर वठ चिलम पी रह थ। वे ही जब-तब ठाकुर की खुशामद करके उसे शान्त करने की कोशिश करते, पर वह तो गालियों के घोड पर सवार था। वह कह रहा था— एक एक को देखूँगा, माता को, दवी

का चन्दावा छिपाकर रख लेते हैं। हम लोगों को बारह आना मिलना चाहिए तो कभी अठन्नी या कभी नौ आने देकर टाल देते हैं।" फिर जोश मे आकर बोला—"आँखों मे धूल झोंकत हैं साले। यात्रियों का माल चरते हैं सो ऊपर से। उनकी औरतों को घूरते हैं सो घाते मे। जैसे सारे सुख इन साले बमटों के लिए हैं। अब से हर ठाकुर की पत्तल लगा करेगी तभी इन बामनों का यात्री लोग खाना खिला सकेंगे। मैं अभी जाकर बलबीरसिंह से कहता हूं। ये साले माल चरें और हम टुकुर-टुकुर देखते रहें।"

दूर बैठा बामन का एक बेटा बोला—

'ठाकुर का बामन है जागे बामन तो बामनई रहग और जाओ तो बामन धूं ही खराम हैं, ठाकुरन धूं तो खवायमते रहे।'

देवी तो हमारी है हमही इसके मालिक हैं तुमतो साले इसके पुजारी हो।"

"तो ठाकुर तुमई पूजा करो हम काहे ?"

"हाँ, हम ही पूजा करेंगे।'

"फिर कोऊ धेलाऊ नायँ चढावगा सारी जात बन्द है जायगी, कहूँ ठाकुरउ पुजारी भये हैं ? एक व्यक्ति ने दूर से चिलम पीते हुए कह दिया।

तो हम इन मूर्तियों को तोड देंगे कोई परवाह नहीं।

ललिता प्रसाद को देखकर ठाकुर बोला—'ललिता मिसिर, कहे देता हूँ। मैं मन्दिर का खंडहर कर दूँगा साले तुम लोग रोज यात्रियों का माल चरते हो और हमको कुछ नहीं मिलता। हमी बहन मालिक इस देवी के और हम ही खीर मालपुआ को तरसते रहें और तुम साले माल उड़ाओ।

'तो ठाकुर निती सन्त सूं चली आई है हमी तो रच्छक रहे हैं। ललिता प्रसाद ने नरमी से पुचकारते हुए ठाकुर को उत्तर दिया।

'एक रच्छक किस काम के, सबके मैं बैठा टुकुर-टुकुर देखता रहा

ग्रौर तुम साले मात चरते रहे, तुममे से किसी ने इतना न किया कि सेठ से कहकर एक पत्तल इधर भी डलवा देते।'

'तो ठाकुर है के तुम का खाते ? जि तो बामनन को काम है।"

"मैं नहीं मानता, ठाकुर के भी वैसा ही मुंह है जैसा बामना के, उनका क्या कम स्वाद लगता है ग्रौर तुमका ज्यादा, सब गलत बात है।'

तो या म का है, तुमउ नाऊ बारी के पास बैठ जाग्रो बरो, एक पत्तल मिल जाग्रो करैगी।'

ठाकुर ग्रौर भी भभक उठा। ललिता प्रसाद ने हाथ पकडकर शात करते हुए जेब से एक बीडी निकाली ग्रौर बोला—

"लेउ बीडी पियो याम का रक्खो है ग्रागे मूं एक परोसा को इन्तजाम है जायगो।'

ठाकुर बीडी पीता वहीं चबूतरे पर बैठ गया, एक कश खींचकर बोला—

मैं कुछ नहीं मानता, न गगा को मानता हूँ न तुम्हारी देवी को।

'ता देवी का चढाग्रो लडग ?'

'मुफ्त म मिलता है तो क्या छोड दूगा ?

मुफ्त उफ्त की बात नायँ, बात तो बामन ठाकुरन की है। हमन तो सिरफ याई गाम म ठाकुरन कूँ देवी को चढायो लेत देखो है तुम जानो ठाकुर, जि तो बामनन को काम है।

गुस्से म ठाकुर खडा होकर बोला—

बामन क्या साले दूसरी जगह से पदा होते हैं ग्रौर ठाकुर दूसरी जगह से क्या फरक है हमम ग्रौर तुमम ?

दूर बठे हुए एक लडके ने कह दिया—

'बामन परमसुर के मुख सा भये हैं ठाकुर।"

इसी समय ग्रौर लाग ग्रा गए चबूतरों ग्रौर पास पडे तख्तों पर बठ गए। ठाकुर फिर भी बडबडा रहा था। लोगो ने उसकी बातें ग्रन सुनी करके ग्रापस म बातचा शुरू कर दिया। ठाकुर थोडी देर बाद

उठकर चला गया तो एक ने कहा—

"थाय ठाकुरै बडी जलन है, लोग बामनन कूँ क्यों खवाव हैं, क्यों पूजें हैं। देवी कूँ पत्थर माने है और चढाय कूँ मूड फोरे है।'

ठाकुर क्या करें, भूखे मर रहे हैं काम होय नहीं है, तुम जानो, जिमान्दारी जब से गई तब स इनके और बुरे हाल है।' दूसरे ने गम्भीर होकर जवाब दिया।

तीसरे ने नशे मे धुत्त होकर अँगडाई ली तो चौथा वाला—

गौना करायले चर्राने क्यो है ?'

'जात के बाद जागो, रह्यौ नायँ जाय कछु पैसउ तो हाथ गाठि म। परसादी से कई ही रबडी ल क सीधौ अइयो, अभी लौटोई नायँ, याकौ सिर फोरूँ। नसा तज है रह्यो है।"

'अरे आ जायगो, मरो क्यों जाय ?'

नशे म धुत बठे हुए उसने देखा परसादी रबडी का दौना लिये हुए आ रहा है तो गगाचरण ने दूर से पुकारकर कहा—

'रबडी लबे गयौ हो क ब्याह करायबे, यहाँ नसापत्ता म पेट धर्धाक उठो ला जल्दी।" परसादी ने चुपचाप दौना दिया तो गगाचरण वहीं बठा बठा सब चाट गया। पास रखे लोटे से हाथ धोकर धोती से पोछ लिए और एक आदमी से बीडी मागकर पीता हुआ टीले से नीचे उतर गया।

रात बढ़ रही थी आरती करके धीरे धीरे पुजारी आया, तो ललिता प्रसाद न पूछा—

'कुल कितनी बनी ?'

पचास रुपया। बीस तो मैंने अलग छिपाय लीन्ह तीस बाँटे।'

'तो दस मोकूँ दे ला।

'दो मैं और लगो।

क्यों ?

"दुगियारी क नाम दउग ?"

"वाये बात की हुसियारी हमऊ तो ग्राध दवे।'

"बड़ी मुसकिल सूँ बचाय हैं। ठकुरा गिद्ध की तरें देखत रह्यो हो। मैंनेऊ कह, सारे तरे जसे तो मैंने टाग के नीचे सूँ निकारि दये हैं, वेउ आठ और लेउ।"

ललिता प्रसाद ने आठ रुपय अटी म खांसे और पुडिया म से एक पान निकालकर खाया।

"जमानों बड़ौ खराब है हुसियारी सूँ न रहौ तो सब चबाय जायँ। दिन भर मेहनत हम करें, रात कूँ मन्दिर म हम रहें रखवाली हम करें, और ले जायँ जे ठकुट्टा।"

लछमन चुपचाप बठा रहा, ललिता फिर भी बडबडा रहा था। दो कुत्ते आकर उनके पैरों के पास बठ गए। ललिता प्रसाद उठकर गया और चार पूरी दोना को डाल दी। दो-दो लड्डू दोना खाने लगे। उसने बताया सेठ जब ब्राह्मणों को भोजन करा रहा था, और सेठानी भोग लेकर मंदिर म गई तभी मैंने दस-बारह लड्डू और पूड़ी निकालकर चुपके से आलमारी म रख दिए थे। लछमन का जी लड्डू खाकर न भरा तो वह मन्दिर के एक कोने से एक पत्तल म कुछ पड और पूरी ले आया। ललिता प्रसाद कुएँ से पानी भर लाया। दोनों ने डटकर भोजन किया। लछमन बाकी बचा कपडे म बाँधकर घर ले गया। ललिता प्रसाद मन्दिर की रखवाली के लिए दालान म चगाइ पर लेट गया।

ललिता प्रसाद बूढा नहीं है पर दांत गिर गए हैं। काठी काफी कडी और मेहनती है। उम्र चालीस-पैंतालीस के बीच। बचपन म बाप ने संस्कृत पढाइ तो मन न लगा। पाठशाला गाव के बाहर गंगा के
५ किनारे थी। सवेरे दो रोटी पोटली में बाधकर ले जाता और वहीं दस बजे के लगभग गंगा नहाने के बाद अचार या नमक से खा लेता। फिर इमली तोडता खाता घर लौट आता। मौसम के दिनों म कभी-

कभी खेतो से कपास के टोटे तोडकर उसके बदले गुड से रोटी चलती। वह ललिता का आनन्द का दिन होता। बाप माता के मन्दिर का पुजारी था। वह समझता, लडका शास्त्र-पारंगत हो रहा है, बस, कुछ ही दिनो म पाणिनि या पतंजलि बन जायगा। कहने को ललिता पाठशाला जाता पर घाटो पर यात्रियो से पैसा माँगता और चुपचाप ठीक समय पर घर लौट आता। एक दिन अचानक शाम को गाँव म आये गुरुजी से पूछने पर मालूम हुआ कि ललिता महीनो से दिखाई नही दिया। बाप मंगली ने घर आकर खाना खाते लडके को देखा तो मन्दिर म कुत्तो की रखवाली करने वाले डंडे से धुन डाला। उसकी आदत फिर भी न सुधरी। उम्र के साथ शरीर मजबूत हुआ कद उठा तो उजड्डपन बढा। चौडी छाती मजबूत पुट्ठे और बफिक्री के माल ने ललिता को रसिया बनने के साथ उच्छृंखल और अशिष्ट बना दिया। बाप तो जसे उसका दोस्त हो गया। माँ को उसने कभी सेंटा ही नहीं और एक दिन पडोस की लडकी को लेकर भाग गया। पर वह इस नान में मूस स्टेशन पर ही पकड लिया गया।

आखिर घाट पर चटाई बिछाकर चन्दन, रोली गंगारज, कंघे, शीशे के सामान के साथ वह स्वयं हल्दी मिले पीले चन्दन की मछली माथे पर बनाने म सारे घाट पर प्रसिद्ध हो गया। मन्दिर की पूजा से उस घाट पर बठने म अधिक सुख मिला। चन्दन म कपूर मिलाकर उसे ठण्डा और खुशबूदार बनाना उन घाटवालो म इसका सर्वप्रथम आविष्कार था। सवेरे ही भाँग का गोला चढाकर सरसो के तेल में डूबे बाल काढकर और सारी देह म चन्दन गंगारज पोतकर जब वह घाट पर बठता तो उसका मजबूत और साँवला शरीर रामायण म वर्णित लंका के किसी निशाचर का चित्र उपस्थित कर देता। डोरे पडी, लाल लाल कजरारी आँखों म अक्खड़ के साथ-साथ मूर्खता और उजड्डपन झाँक उठते। ज्ञान की नींव म उस एक अधूरा मंत्र और पाँच-सात 'गंगालहरी' के श्लोक याद थे।

एक दिन गाव का एक आदमी उसे ब्याह कराने ले गया तो उन पाच सात श्लोकों और संकल्प के सहारे उसने वर-वधू को पार पहुँचा दिया। इसके व श्लोक श्राद्ध में, मरे हुआ के पिण्डदान म भी सहायता करते, सत्यनारायण की कथा बनकर यजमान की कामना पूरी करते। उसे गाने का शौक बचपन से ही था। गला बहुत अच्छा तो न था पर ऐसा बुरा भी नहा कहा जा सकता। अकेली-दुकेली स्नानार्थी औरत के सामने उसका सामगान फूट उठता—

'तुम हमें देखो न देखो हम तुम्हें देखा करें।'

माय ही 'जय गंगे' की धुन से तमाम नहाने वाला पर वह अपनी भक्ति की धाक बैठा देता। एक दिन मंगली ने दूसरे गाव से लाकर रीछ के साथ बदरिया बाध दी। इधर उधर चरने वाला साड बैल बनकर गहस्थ की गाडी मे जोत दिया गया। घाट पर मामूली दिनों में चार पाच आने कुछ आटा, गेहूँ चना, गुड बाजरा, मक्का, सतनजा मिल जाता। मेले के दिना म अधिक आमदनी हो जाती। कभी कोई यात्री भोजन करा देता तो खीर, पेडा बूरा, पूरी और लड्डुआ पर हाथ साफ करते उसका पेट 'ब्लेडर' की तरह तन जाता। साँस की नालिया भारी हो जातीं। फिर भी ललिता के प्राण भाग्यवान के अमित आनन्द मे धन की ढेरी पर साप की तरह सासों के फन फैलाए निकलने का नाम न लेते। थोडे ही दिना मे गाव म भोजन के मच की टीम म वह 'फस्ट इलेवन' मे आ गया। कसरत और भाँग, यही उसके दो मित्र थे। सृष्टि के निर्माण में ब्रह्मा के आदेश का पालन करते हुए यद्यपि उसने अपनी तरफ़ से कोई कोर कसर नहीं रहने दी, पर घरनी ने उन्हें अपनाया ही नहीं तो वह क्या करता। तेरह की सृष्टि म तीन बचे—एक लडका और दो लडकियाँ। ललिता ने चाहा यदि वह लडके को अग्रेजी पढाकर वकील बना सके तो क्या गाँव उसकी भृकुटी का तेज सह सकेगा—नहीं। इसी उद्देश्य म उसने थोडी हिन्दी के बाद पास के कस्बे म लडके को अग्रेजी पढने बिठा दिया। पर पिता का

अनुगामी यशस्वी पुत्र पाँच साल के निरन्तर प्रयत्न से जब एक भी क्लास आगे न बढ़ा तो पिता को मजबूर होकर, अपने हृदय से पुत्र के वकील बनने की 'कील' उखाड़ लेनी पड़ी। हारकर एक दिन शुभ मुहूर्त में उसे अपने पास ही तरत बिछाकर घटवालिया बना लिया। पुत्र को किसान बनने की धुन थी, उसे इस काम से घृणा थी। उन्हीं दिनों लोगों ने देखा, उसने आध बगाई पर एक खेत ले लिया है। आम के मौसम में उसने बाग ले लिया और आम बेचने लगा। बाप की मृत्यु के बाद ललिता ने मन्दिर की पूजा द्वारा अपना जन्म सुधारने का निश्चय किया। अब वह ठेके पर मन्दिर का पुजारी था। उसमें बहुत आमदनी तो नहीं थी फिर भी पेट भर जाता था।

ललिता ने जीवन में रोटी दाल को कभी भोजन नहीं माना। उसकी दृष्टि में पूरी कचौरी लड्डू मध्य स्तर के भोजन थे और रबड़ी पेड़ा खीर उच्च स्तर के। इसलिए हर सबेर उसकी कोई कामना जागती तो वह स्वर्ग की उसी आखिरी सीढ़ी पर पहुँचने की, जहाँ जाकर उसके पितर भी तृप्त होते रहे हैं। कपड़े का महत्त्व उसे कभी भी अपनी ओर नहीं खींच सका। इसलिए भोजन के समय जैसे अन्न को मक्खियों, कुत्तों से बचाना आवश्यक है इसी तरह पेट की सुरक्षा के लिए उसने कपड़ा के महत्व को स्वीकार किया। लड़का रामधन बहू के साथ अब घर का मालिक बन गया। ललिता, पत्नी की मृत्यु के बाद से रात को मन्दिर में ही रहने लगा था। इससे दूसरे पुजारी गंगाचरण का भी सुभीता हो गया। अब वह रात में घर पर रहता। एक तीसरा पुजारी था—संग्रहणी का रोगी लछमन जो बीमारी के मारे केवल दिन में ही आता बाकी समय घर में पड़ा या तो मक्खियों की संख्या गिनता या फिर जगत की धरती को अपने पेट का प्रसाद बाँटता रहता।

उस चतुर्दशी की रात में अंधेरा अपने पूर्ण यौवन पर था। अंधेरे में चमकती पान बस की पाँत की तरह मन्दिर के दरवाजे पर कड़ुए तेल का दीया अपने अस्तित्व के लिए लड़ रहा था। शिवा 'लो' के

उसके सारे ग्रवयवो का जैसे ग्रधरे न पी लिया हो। मदिर के मुख्य द्वार पर दो कुत्ते चौकसी कर रहे थे। मामूली तौर पर ग्रौर समय सोने से पहले ललिता प्रसाद मुख्य द्वार बन्दकर देता, पर ग्राज न जाने क्या वह चुपचाप चटाई पर जा लेटा। ग्रलमारी से उसने न बिस्तरा निकाला, न लोटा ही पानी का भर कर रखा। वह नगे मे सुस्ताने जा लेटा तो सो ही गया। उस समय मदिर मे उसकी नाक हारमोनियम बजा रही थी। पहले तो स्वाभाविक रूप से ललिता प्रसाद की नाक के सरगम पर कुत्ते चौंके, गुर्राए, फिर ग्रपनी पहचान की भूल पर गम के मारे चुप हो गए। फिर भी गाव के कुत्तो के प्रास्ताविक व्याख्यान सुनकर वे कभी-कभी ग्रपनी ग्रोर से सशोधन पास कर देते। ग्रन्य मूक प्राणियो मे 'लेहु' की एकान्त तलाश मे सूग्रर कभी-कभी ग्रापस मे घुरघुरा उठते। कभी मचान से ग्रधनींदे किसानो की चेतावनी भरी ललकार सुनाई दे जाती, जिससे भाऊ के झुण्ड मे भागती नीलगायो की सुरसुराहट प्रखर हो उठती। एक तरह से सब ग्रोर चुप्पी थी। मदिर के नीचे बहती हुई गगा की लहरें भी ऊघ रही थी।

न जाने कब तक ललिता ग्रौंधा-नींदा मे पडा रहा कि इतने मे कुत्ते गुर्राये, परन्तु हल्की डपट सुनकर चुप भी हो गए। ललिताप्रसाद ग्रब भी हवा को ग्रपनी सासें बाट रहा था। वह तो जैसे ब्रह्माण्ड मे चेतना तन्तुग्रो को छिपाये सासो की उलट-बासी पढ रहा हो।

'ललिता, ग्रो ललिता," धीरे से एक ग्रावाज ग्राई।

ललिता फिर भी खुर्राटे ले रहा था ग्रन्त मे हिलाने पर उसके सुप्त प्राण लौटे।

"कौन ?"

"मैं हूँ सो रहा है ?'

"हा कहकर उसने करवट बदली, 'तू !

"हा कहकर वह पास ही चटाई पर बैठ गई।

'बडी ग्रधेरी है।"

"मुझे अंधेरे में भी दीखता है।'

आज ब्राह्मण भोजन हते मैंने सोची तोऊ बुलावतो पर फुरसतो नायें मिली कछु खायगी ?' कहकर ललिता अलमारी में से लड्डू, पेड़े और पूरी निकाल लाया। दोनों ने मिलकर खाया। खाते खाते चमेली बोली मुझे भी फुरसत नहीं मिली और मिलती तो भी क्या आती ? रिपुदमन मंगाविया, हाती सरापत गंगापुर गय हैं।'

क्यों ?

तू नहीं जाने जैसे तू तो बिलकुल भोला है।'

'समझि गयी तेरो कितनो हिस्सा है ?

चार आने मैंने कही, मैं बताती हूँ रखवाली करती हूँ तो चार आने से कम न लूँगी।"

तो मानि गए ? दलि काऊ दिना पकरी गई तो फाँसी प धरी मिलगी। तेरे है ही कौन जो इतने फरफन्द रच है घाट प बैठई है। मोय तो तेरो काम पसन्द नायें चमेली !

चमेली ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह खाकर मुँह पर हाथ फेरने लगा। चटाई पर गिरे अन्न को अन्दाज से साफ करते हुए उसने जेब से बीड़ी निकाली और पीने लगी। फिर बोली—

आता रुपया किसे बुरा लगता है ललिता, मैं तो डाका नहीं डालती। पकड़े जायेंगे फसेंगे तो वे ही। जिस दिन ऐसा होगा सारे हथियार और गहना गंगा में फेंक दूँगी।

ता तोय इतने रुपयन को करनो का है चमेली जान ?'

'चमेली जान। कहकर चमेली हँस दी। मैं जाती हूँ जरूरी जगह जाना है। वह उठी तो रुककर बोली 'वाप-भटों में से किसको चुनूँ ललिता ?

क्यों ?'

रामधन की आँखें खराब हो रही हैं जब-तब मुझसे मसखरी करता है।

'मैं तो वामूँ बाननउ नाऊँ, मर जान तो वु मरि गयी। वा ग्नि वाकी ग्रौरत न मरी नइज्जती वर दई।"

'न्वर, मैं उसे ठीक वर दूँगी। तू चिंता मत कर। यह तो मर बायें हाथ का खेल है। चमेली कच्ची गोटियाँ नहीं खेली है।'

ललिता हँसकर बोला, "यामें ग्ग शक है, नो सो चह नाय मइ है।'

दोनों बाहर ग्रा गए। बिना हाते हान चमली ने कहा—

"वदरीनाथ जगन्नाथ, द्वारिका चलेंग ललिता !'

"मैं तो नगो हूँ चमली सौ दो सौ सें तो कछु है नायें सक।

मैं किसलिए हूँ तू परवा मत कर !"

चमली अँधेरे म गायव हो गई, ललिता बिस्तर बिछाकर लेट गया। चमली से रामगन की हरकतें सुनकर पहले तो उसे वडा गुस्सा ग्राया पर भाग के नग की नपुसकता म धीरे धीरे शात हो गया। उमन सोचा, यही कौन ग्रच्छी है, न जान कहा-कहा खेलती रही है, क्या-क्या किया है इसन। उसे वह दिन याद ग्राया जब वह एक बार उसे लेकर भागा था ग्रौर स्टेशन पर ही पकड लिया गया था। यही सोचता वह सो गया।

चमेली ललिताप्रसाद से विदा होकर गगा क किनारे किनारे गहरे खारों म उतरती-चढती लगभग एक मील दूर एक झोंपड़ी म घुस गई। उसम बहुत ही हल्का एक दीया जल रहा था। एक ग्रोर चटाई बिछी थी। उसी पर कम्बल बिछाये एक ग्रादमी लेटा था। चमली के घुसत ही उमन उचककर पूछा, कौन ?

'चमली। ग्रभी नहीं ग्राये ?

"ग्रात ही होंग,' कहकर वह उठा ग्रौर बाहर जाकर बरोसी से चिलम म ग्रांच रख लाया। दोनों चिलम पीने लगे—

"सुलफा नहीं है ?

खतम हो गया। एक चिलम का था, सो लाग पीकर चले गये।

'हूँ रांड चिाम मैं नही पीती, तू ही पी।"

वह व्यक्ति चिलम पीता हुआ बोला—

रांड को गड कम अच्छी लग सकती है चमती ?' कहते हुए वह मुस्कराया।

'तू क्या नहीं गया ?

तू ही समझ ले।

चमनी चुप बठी रही, वह व्यक्ति जरा पास सरककर बोला, चमती !

चमेली फिर भी चुप रही। थोडी दर बाद उसने कहा—

दूर हट के बठ।

वह और भी निकट आ रहा था। चमेली ने आव देखा न ताव, कसकर एक चाँटा उसके मुँह पर जड दिया और दूर हटकर बठ गई।

वह आदमी थोडी दर चुप रहकर चमेली पर जा टूटा। वह भी कम न थी तडातड हाथ के मोटे कडा स उसे मारने लगी। जहाँ पाया काट लिया दोना में काफी देर तक मिसमिसी लडाई होती रही। उस झोंपडी म तज सांसा के सिवा चाँटों और मुक्का की आवाजें आ रही था। चमली टाग स उस घसीटकर बाहर ले गई और तडातड लात-लात मारती बोली—

न और स मरे, चख लिया मजा ?' लौटकर चटाई पर आ बठी। वह आदमी बाहर पडा गाली देता रहा।

'दख लूंगा डायन है डायन।

चमेली फूली हुई सांसों स बह रही थी—

भीतर पर रखा तो मरे, खादकर गाढ दूंगी।'

एक ?? घटे बाद कुछ आदमिया के पैरा की आहट सुनाई दी। वे एक एक करके झोंपडी म घुसे। हथियार उन्होंने पड के नीचे गड्ढे म पत्तो म लपटकर रख दिए और मिट्टी डालकर गड्ढा बराबर कर दिया। चमेली ने दीये की लौ ऊँची कर दी। एक न आगे म से

5070

सुल्फा निकालकर बाहर पडे आदमी से भरने को कहा और चटाई पर लूट का सामान फैला दिया गया।

'आज अच्छी बोहनी नाय भई।'

"बनिया होता तो कुछ मिलता, औरतो से क्या मिलेगा ?'

'एक हजार का माल तो होगा ही।' कहकर पहले ने गहने रुपये अलग अलग किये। दूसरे ने टार्च जलाकर गिना। एक सौ अड़तालीस रुपये चार आने के अलावा सोने-चाँदी के गहने थे। रूपा की आवाज लगी, 'ले गला जल्दी से। सब चिलम पीने लगे। रूपा ने कोने में पड़े कामने सुलगाकर धौकनी चलाना शुरू कर दिया। थोड़ी देर में सोना चांदी अलग अलग करके गलाया और टुकडे करके सबमें बांट दिया गया। घंटे भर के बाद चटाई और दीये के सिवा वहाँ कुछ नहीं था।

चमेली ने पोटली धोती की गांठ में बांधकर थाम ली और सीधी घर पहुँची। उस समय ढाई-तीन का समय होगा। पांच बजते-बजते गंगा नहाकर तख्त बिछाया, हुरसा लेकर चन्दन घिसा और माला लेकर राम राम करने लगी। वह सबसे पहले आकर अपने तख्त पर चन्दन तैयार करती और माला लेकर बैठ जाती। सवेरे नहाने वाले यात्रियों में सब उसे अच्छा समझते। शक्ति भर आटा, चावल, गुड़, जो कुछ बनता देते और तिलक लगाकर चल देते। देर से आने वाले घाटिये उससे ईर्ष्या करते। कभी-कभी कोई मजाक में कह बैठता—

'चमेली तू इतनी कमाई को का करेगी, आगे नाथ न पीछे पघा। सवेरे भयो नई कें आय गई।'

चमेली जवाब देती, 'भैया, इतना आता ही कहाँ है, थोड़ा-बहुत मिलता है उसी में गुजारा करती हूँ। न जाने कितनी जिन्दगी है। हारी-बीमारी में तुम्हीं लोगों का सहारा है मर जाऊँ तो गंगा में फेंक देना।'

'हां हां, क्यों नहीं ?' एक कहता।

"तू मोय अपनो वारिस बनायल चमेली !" दूसरा कहता।

'तुम सभी तो मेरे वारिस हो सब-कुछ तुम्हारा ही तो है।' चमेली जवाब देती।

चमनी रानी बोली म बात करती तो लोग कहते—

'पारसी वाल है चमेनी।'

दूसरा जवाब देता अरे दुनिया देखे भई है। कौन-कौनसे गाम म रई है तू? उन्ही म से एक कहता 'गाम नहीं सेहर कह। सेहर म रई है—बम्बई कलकत्ता एमदावाद, जाने कहा कहाँ अपने मालिक के साथ घूमती रई है।"

*शरीर म गंगा बनी ही सो गंगा प आय गई।'*

चमनी अपने सम्बन्ध म उनके प्रश्नोत्तर रोज सुनती और मुस्करा देती।

एक दिन यात्री नहा धोकर चल गये थे। घाट वाले मक्खी मार रहे थे कि एक नौजवान घाटवाला उसके तख्त पर बैठकर कहने लगा—

चमनी बरसात म मेरो टपरा गिरि गयो है रहन कूँ जगह नायँ, तू कहै तो तेरे ही घर आय रहूँ। थोरे दिनन की बात है। मकान बन जायगो तो चलो जाऊँगा।

दूसरे ने सुना तो वहीं से हँसकर कहने लगा—

'आदमी बुरो नायँ चमनी तेरे सब काम करेगो।

चमनी ने जवाब दिया नहीं भया मैं नहीं रख सकती मैं अकेली ही भली हूँ।

सीधे सादे घाट वाले मानते कि चमनी नेक औरत है बेचारी जस तस जिन्दगी के दिन काट रही है।

चमनी बहुत खूबसूरत नहीं थी पर बुरी भी नहीं थी। मझोला कद, साफ रंग, गोल और लम्बा मुँह मोठ और नाक पतले सीधे और नसीली आँख उभरा माथा, गुंथा हुआ शरीर। देखने म आकर्षक।

तीस-बत्तीस के बीच की उम्र। चेहरे में भोलापन टपकता पर उसकी तेज आंखों को निरन्तर देखते रहने से लगता, यह स्त्री जैसी दीखती है वैसी नहीं है। गहराई से देखने पर कोई भी समझ सकता था कि इसके मुस्कराने और हँसने के भीतर कुछ और भी है। अपने जीवन के अनुभवों के कारण आदमियों को समझने उनके भीतर की थाह पाने की उसकी दृष्टि बड़ी पैनी थी। आदमियों को खिलाने उन्हें चखमा देने में उसे आनन्द आता था। उसने शिवचरन से पूछा—

'आजकल तू अकेला ही है क्या, बहू कहां गई ?'

"पीहर गई है।'

"तो चल घर रोटी खा लेना, मैं चलती हूँ आ जाना भला।'

चमेली ने खाना बनाया तो शिवचरन पहुँच गया। खाने से पहले हाथ धोने पहुँचा तो घड़े खाली थे। कुएँ से घड़े भरे और खाने उठा। अभी वे बरतन मांजे चौका फेर ही रहा था कि ललिता ने घर में प्रवेश किया। देखकर बोला—

'शिवचरन !

चमेली ने खाट पर लेटे-लेटे उत्तर दिया, 'मां की सेवा कर रहा है क्या ?'

कुछ नहीं पूछो हो, कैसी तबियत है।'

'तेरी तबियत खराब हो गई है, इसे देखकर।

"नायँ तो।' ललिता चौंका, जैसे पकड़ा गया हो।

ललिता जा, भीतर से दरी-तकिया तो उठा ला।'

ललिता बाजार जा रहा था, अचानक इधर लौट पड़ा। उसने दरी बिछा दी, तकिया लगा दिया। चमेली फैलकर लेट गई—

अब तुम दोनों जाओ मैं सोऊँगी।'

शिवचरन अब बदनाम या गुलाम था। सुबह-शाम आकर घर-बाहर के सब काम करता, रोटी बनाता।

एक दिन ललिता ने आकर देखा, शिवचरन चमेली की धोती

साबुन से धो रहा है, और चमेली खाट पर बैठी रामायण पढ़ रही है। ललिता वहीं आकर खाट पर बैठ गया। उसकी आँखों में प्रश्न था। थोड़ी देर बाद चमेली ने शिवचरन को पान लेने भेज दिया।

'पूछ अब क्या पूछता है ?

'जि का है ?'

'क्या ?'

'शिवचरन।

नौकर।

'नौकर ?'

'हाँ।

गाँव में बदनामी है रई है लोग कहै हैं शिवचरन कू कर लीनी है।"

'क्या कर लिया है ? चमेली ने कड़ककर पूछा।

ललिता गुस्से में भरा बैठा था उसने उसी तर्ज में जवाब दिया, खसम, और का।

खसम खाती खाता है ?

"पर नि है का ?"

'इच्छा का दास। उसकी इच्छा है मेरी सेवा करे सो कर रहा है। तुझे क्या जलन है ?'

माय जरा कायदे हाती। ललिता ने तुनककर जवाब दिया।

तू तो ललिता है न ?'

'हाँ, सो तो हूँई। यह कहकर ललिता मुस्कराया।

चमेली ने पैर बढ़ाकर टखना मसलते हुए कहा—

'बड़ा दर्द होता है कभी-कभी। तेल भी मलता आराम फिर भी नहीं है। वह मसलती रही। ललिता ने देखा तो उसका हाथ हटाकर खुद मसलने लगा। इसी समय शिवचरन भीतर घुसा, देखा ललिता चमेली के पैर मसल रहा है। चमेली ने पैर हटाते हुए कहा बस